प्रताप सहगल के नाटक 'रंग बसंती' में राष्ट्र–प्रेम का स्वर एवं जनजागरण

प्रो० दीपा त्यागी
हिन्दी विभाग
इस्माईल नेशनल महिला पी०जी० कॉलेज, मेरठ

श्रीमती चित्रा
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
इस्माईल नेशनल महिला पी०जी० कॉलेज, मेरठ
ईमेलः chitravasu29@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

प्रो० दीपा त्यागी,
श्रीमती चित्रा

प्रताप सहगल के नाटक 'रंग बसंती' में राष्ट्र–प्रेम का स्वर एवं जनजागरण

Artistic Narration 2023,
Vol. XIV, No. 1,
Article No. 6 pp. 38-45

Online available at:
https://anubooks.com/
journal/artistic-narration

सारांश

लेखक द्वारा रचित 'रंग-बसंती' नाटक भगतसिंह के जीवन का आख्यान मात्र नहीं, बल्कि उसके समय को भी पूरी शक्ति एवं जीवंतता के साथ हमारे सामने रखता है। नाटक के नायक भगतसिंह के माध्यम से लेखक ने हृदय में बसे राष्ट्र-प्रेम को उजागर किया है। युवा पीढ़ी के लीजेंड भगतसिंह ने अपने देश को आजाद कराने के लिए ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध जो आन्दोलन किए और क्रांति की लड़ाई लड़ी, उसका वर्णन इस नाटक में देखने को मिलता है। भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु जैसे क्रांतिकारियों द्वारा किए गए साहसिक कार्यों और उनकी शहादत की वीरगाथा को जन–जन तक पहुँचाना इस नाटक का उद्देश्य रहा है।

बचपन में पिता के मुख से सुनी भगतसिंह की कहानी का प्रभाव ही रहा होगा जो लेखक ने कालांतर में भगतसिंह के जीवन और समय पर केंद्रित अपना नाटक 'रंग बसंती' लिखा। 'रंग बसंती' नाटक के माध्यम से लेखक ने अपने हृदय में बसे देश के प्रति प्रेम को उजागर किया। यह बहुत प्रभावशाली नाटक है और रंगमंच पर खेले जाने वाला सबसे सफल और प्रिय नाटक भी कहा जा सकता है।

आजादी के आंदोलन के संभवतः ऐसे दो ही क्रांतिकारी महानायक हैं जो सैक्टेरियन सोच से परे जाकर व्यापक स्तर पर सामाजिक एवं राजनीतिक विकल्प का स्वरूप सामने रखते हैं। किसी भी भारतीय से पूछिए, वह नेताजी सुभाषचंद्र बोस और भगतसिंह का नाम सबसे पहले लेगा। भगतसिंह अपने जीवन काल में ही लीजेंड बन गए थे और आज भी हम उन्हें इसी रूप में याद करते हैं। भगतसिंह ने केवल देश को आजाद करने में ही अपना अमूल्य योगदान नहीं दिया बल्कि जनजागरण और लोकहित के लिए भी सोचा, उनके क्रांतिकारी कृत्यों को तो बार–बार सामने लाया गया लेकिन उनके समाजवादी चिंतन को हमेशा नेपथ्य में ही रखा गया। भगतसिंह न सिर्फ अपने एक्शन में, बल्कि अपनी सोच में भी एक रैडिकल व्यक्तित्व के रूप में सामने आता है। यह नाटक भगतसिंह के इसी रूप को हमारे सामने रखता है। इस नाटक का एक–एक शब्द इतना प्रभावशाली है कि पाठक के मन में अपने देश और राष्ट्र के प्रति जोश भर जाए। पाठक के मानस पटल पर भी न मिटने वाली अमिट छाप छोड़ने में यह नाटक पूर्णरूप से सफल रहा है। उदाहरण के लिए इस नाटक के प्रथम दृश्य के गीत की कुछ पंक्तियाँ-

"कैसा था भगतसिंह– कहो कैसा था भगतसिंह
देखने में हमीं तुम्हीं जैसा था भगतसिंह
****
उसके बदन की मिट्टी का कुछ रंग और था
सोचने का ठोंकने का ढंग और था
ऐसा नहीं, वैसा नहीं, जैसा भी था वह
वैसा था भगतसिंह, वैसा था भगतसिंह।"[1]

इसके आगे जब नादान भगतसिंह बंदूकों की फसल उगाना चाहता है और खेत में बंदूकों की फसल बो रहा है, नन्द किशोर द्वारा पूछे जाने पर भगतसिंह उत्तर देते हैं–

"फसल की यह तैयारी है बंदूकों की,
****
अब तो बंदूकें सिर्फ मेरे काम आएंगी
देश की आजादी के लिए गजब ढाएंगी

धाँय––––––––धाँय––––––––धाँय
चाचा अजीत को बंदूकों की कमी है
जकड़ी गई माता की आँखों में नमी है
मैं कर रहा हूँ काम अपने देश के लिए
यह बंदूकें दनदनाएं देश के लिए।"[2]

दृश्य चार में भगतसिंह द्वारा लिखा गया पत्र, जिसमें वह भारत माता की आजादी के लिए क्रांति लड़ रहा होता है घर से भेजे गए पत्र का उत्तर देते हुए वह कहता है– "मैं आपके खत को पढ़कर हैरान रह गया– जब आप सरीखे देशभक्त और हिम्मती ऐसे मामूली मसलों से हताश हो जाए तो एक आम आदमी की हालत क्या होगी! आप सिर्फ दादी जी की चिंता कर रहे हैं, पर तैंतीस करोड़ की भारत माता कितने कष्ट में है यह नहीं सोचा। मेरा रास्ता शादी का नहीं, इसलिए मुझे इसके लिए मजबूर न किया जाए। दादी जी की तबीयत खराब जानकर चिंता हुई, इसलिए कुछ वक्त के लिए घर आ रहा हूँ।"[3] भगतसिंह बचपन से ही देश के लिए कुछ करने का, मर मिटने का जज्बा रखते थे उन्होंने अपना जीवन देश के नाम कर दिया। उन्हें अपने परिवार के बारे में सोचने का समय ही नहीं था और न ही वह सोचना चाहते थे। वह प्रेम करते थे– अपनी भारत माता से, शादी करना चाहते थे– अपनी आजादी से, आजादी ही उनकी दुल्हन थी। वह अपना पूरा जीवन न्यौछावर करना चाहते थे देशसेवा और जनकल्याण के लिए। दृश्य पाँच में विद्यार्थी द्वारा अपने नौजवानों का उत्साह बढ़ाने के लिए कहे गए ये शब्द -

"आजादी की शमां है, लौ तेज है इसकी
जलने के लिए दिल बड़े शेर का चाहिए।"[4]

इसी प्रकार पूरा नाटक राष्ट्रप्रेम और जनजागरण के प्रभावशाली वाक्य और पंक्तियों से सराबोर है। सहगल जी ने स्वयं अपने शब्दों में लिखा है– "इसी दौर में भगतसिंह की सोच को मैं साफ तरह से पकड़ भी पाया। फिल्मों, कुछ किताबों या कभी–कभी सभाओं में हुए भाषणों से भगतसिंह का जो रोमानी चित्र उभरता है, उससे अलग ठोस यथार्थ की जमीन पर खड़ा, अपनी मिट्टी से जुड़ा, देश की सांस्कृतिक विरासत की पहचान करता भगतसिंह मिला। एक ऐसा व्यक्ति जो मात्र आजादी की मांग नहीं करता, आजादी के साथ वह सामाजिक बदलाव की मांग भी करता है– एक ऐसे समाज की मांग जो शोषणरहित हो और जिसका आधार धर्म, वर्ग, संप्रदाय या जाति नहीं हो सकती।"[5] दृश्य सात में भगतसिंह का ये कथन इस बात की पुष्टि करता है– "हमारी लड़ाई सिर्फ राजनीतिक आजादी की नहीं, बल्कि आर्थिक मुक्ति की भी है। गलत समाज और विधान भी आदमी का बनाया हुआ है, और हमें ही बनाना है एक वर्गहीन समाज, शोषणहीन समाज, खुशहाल समाज।"[6] भगतसिंह द्वारा कही गई ये पंक्तियाँ उनके इन्हीं विचारों को व्यक्त करती हैं–

"करेंगे सामना करेंगे हम

धर्म के अधर्म से लड़ेंगे हम
भूख से मरे जो आदमी
धूप से मरे जो आदमी
ऐसा समाज वह नहीं
जो है हमारी कल्पना
कर्म का है फल अच्छा–बुरा
यह मानकर न मरेंगे हम
करेंगे सामना करेंगे हम
धर्म के अधर्म से लड़ेंगे हम।"[7]

"ऐसे समाज का सपना देखा था भगतसिंह ने, और हमने उसके इन विचारों को पार्श्व में डालकर एक ऐसी प्रतिमा गढ़ी, जो क्रांतिकारी केवल आजादी हासिल करने तक है और उसके बाद इसकी भूमिका खत्म हो जाती है यह कहना व्यर्थ न होगा कि इस प्रतिमा गढ़ने के पीछे धर्म के कठमुल्लों, स्वार्थी राजनेताओं तथा दूसरे भीरु लोगों का हाथ है। आज स्थिति यह है कि युवा पीढ़ी भगतसिंह का नाम जानती है, यह भी जानती है कि उन्होंने आजादी के लिए शहादत का वरण किया, लेकिन भगतसिंह के समाजवादी चिंतन, आदर्शवादी मानवीय मूल्यों और क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन की बात खुलासे से नहीं जानती।"[8] भगतसिंह ने देश की आजादी के लिए जिस साहस के साथ शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार का मुकाबला किया, वह युवाओं के लिए हमेशा ही एक बहुत बड़ा आदर्श बना रहेगा और शायद इसी उद्देश्य के साथ सहगल जी ने 'रंग बसंती' की रचना की। उन्होंने राश्ट्रप्रेम के साथ जनजागरण के प्रति अपनी चिंता और विचार व्यक्त किए। भगतसिंह ने भारतीय समाज में भाषा, जाति और धर्म के कारण आई दूरियों पर दुख व्यक्त किया है। उन्होंने समाज के कमजोर वर्ग पर किसी भारतीय के प्रहार को भी उसी सख्ती से सोचा जितना कि किसी अंग्रेज के द्वारा किए गए अत्याचार को। दृश्य ग्यारह में यह कथन, एक 'शोषण रहित समाज' की कल्पना को दर्शाता है जो एक पोस्टर के माध्यम से जनता तक पहुंचाया जाता है– "हम मनुष्य के जीवन को पवित्र समझते हैं– परंतु क्रांति द्वारा सबको समान स्वतंत्रता देने और मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण समाप्त करने के लिए कुछ न कुछ रक्तपात अनिवार्य लगता है। इंकलाब! जिंदाबाद!"[9]

उनका विश्वास था कि उनकी शहादत से भारतीय जनता और उग्र हो जाएगी, लेकिन जब तक जिंदा रहेंगे ऐसा नहीं हो पाएगा। इसी कारण उन्होंने मौत की सजा सुनाने के बाद भी माफीनामा लिखने से साफ मना कर दिया। भगतसिंह द्वारा ये पंक्तियाँ उनके राष्ट्रप्रेम को व्यक्त करती हैं–

"इंकलाब जिंदाबाद! इंकलाब जिंदाबाद!!
****

देश की मिट्टी से है
देश के हैं हम
मर मिटें क्यों हटें
है बाजुओं में दम
आने वाली पीढ़ियाँ हमको करेंगी याद– जिंदाबाद
जिंदाबाद! इंकलाब जिंदाबाद!!
****

अन्याय के खिलाफ
हम हैं लड़ रहे
दुश्मनों के चेहरे
काले पड़ रहे
आजाद होके हम रहे, करेंगे न फ़रियाद - जिंदाबाद!
जिंदाबाद!! इंकलाब जिंदाबाद!!"[10]

भगतसिंह को मौत से डर नहीं लगता बल्कि वह तो खुद को बहुत खुशकिस्मत मानते हैं कि उनकी जान देश के काम आएगी। दूत द्वारा सजा–ए–मौत सुनकर भी उनके चेहरे पर जरा भी शिकन नहीं थी यह देखकर जेलर ने उनसे पूछा– आपको मौत से डर नहीं लगता? उत्तर में भगतसिंह ने कहा–

"जिस मरने ते जग डरे, मेरे मन आनंद।
मरने ही ते पाइए, पूरन परमानन्द।।"[11]

फाँसी से पहले जब भगतसिंह के परिवार के सदस्य उनसे मिलने आते हैं तब भी उनमें बहुत जोश और चेहरे पर विश्वास झलकता है। उनको देखकर उनकी माँ विद्यावती भी अपना दुख भूलकर भगतसिंह को प्यार करती हुई कहती है– "रोंदी आयी सां पुत्तर, तेरियाँ गल्लाँ सुन के हसदी जावांगी, मरना ते सबने है पुत्तर, देश खातिर मरना ––––––घबराई ना ––––––इंकलाब जिंदाबाद! याद रखीं ––––––वाहे गुरु ––––वाहे गुरु––––––(कहती हुई आँखें पोंछती हुई लौट जाती है।)"[12]

प्रताप सहगल द्वारा लिखा यह नाटक एक जीवंत नाटक है। इसको पढ़कर ऐसा लगता है जैसे हम उसी समय में पहुँच गए हों। जैसे–जैसे नाटक को पढ़ते जाते हैं वही दृश्य बनकर हमारी आँखों के सामने आने लगता है। दृश्य पच्चीस में जब चत्तरसिंह भगतसिंह से विनती करते हैं कि वह फांसी चढ़ते समय 'वाहे गुरु' का नाम ले, वह भगतसिंह के लिए गुटका लाते हैं तब भगतसिंह मुस्कुराते हुए कहते हैं– "बाबा! आपकी इच्छा पूरी करने में मुझे कोई ऐतराज नहीं, लेकिन यह बुजदिली है। आज तक नास्तिक रहा और अब––––––नहीं––––––लोग यही

कहेंगे ना भगतसिंह नास्तिक था————यह तो नहीं कि वह बुजदिल और बेईमान था————मुझे माफ कर दो बाबा, मेरा ईश्वर, मेरा धर्म, मेरा ईमान सब भारत है।"[13] यह सुनकर चत्तरसिंह की आँखें डबडबा जाती हैं और वह भगतसिंह को आशीर्वाद देते हुए चले जाते हैं।

"राजगुरु सुखदेव भगतसिंह
बढ़ चले लगाते नारे
इधर पिता और माँ फिरते
मिलने को मारे–मारे
वक्त बदलकर सत्ता ने
धोखे में रखा देश को
समझा नहीं फिरंगी ने
शहीदी सुन्दर वेश को
खौफ ने अपने को फैलाकर
गोरों की रग–रग छू ली
वक्त से पहले यह परवाने
लगे चूमने सूली
लगे चूमने सूली।"[14]

समय से पहले फांसी की खबर मिलने पर भी भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव तीनों क्रांतिकारियों के चेहरे पर जरा भी उदासी या घबराहट नहीं थी उन्होंने काले कपड़े पहनने से इंकार कर दिया कहा कि– "हम कोई चोर, डाकू या कातिल नहीं, जो ये कपड़े पहनें, हम नहीं पहनेंगे। उस वक्त भी उनका स्वर जोश से भरा हुआ था।————कल मरना या आज, क्या फर्क है। चलो।————कहते हुए भगतसिंह आगे बढ़ते हैं। राजगुरु और सुखदेव भी साथ में बढ़ते हैं फांसी के वक्त तीनों से उनकी अंतिम इच्छा पूछे जाने पर तीनों का उत्तर अलग लेकिन उद्देश्य एक ही होता है जिसमें राष्ट्रप्रेम, जनकल्याण और आजादी का स्वर गूँजता है–

"राजगुरु – "बार–बार यहीं जन्म लूँ और कुर्बान हो जाऊँ, जब तक देश आजाद ना हो जाए।"

सुखदेव - "मजदूर–किसान एक हों, साम्राज्यवाद का नाश हो।"

भगतसिंह - "नहीं जानता दोबारा जन्म होता है या नहीं, होता हो तो बार–बार भारत में जन्म लूँ और कुर्बान हो जाऊँ। दिल से निकलेगी मरकर भी वतन की उलफ़त, मेरी मिट्टी से भी खुशबू–ए–वतन आएगी।"[15]

तीनों 'इंकलाब–जिंदाबाद' के नारे लगाते हुए फांसी के फंदों की ओर बढ़ते हैं। भगतसिंह बीच में और दाएं–बाएं राजगुरु तथा सुखदेव। तीनों फंदों को चूम लेते हैं। उन्हें काला

नकाब पहना दिया जाता है। मजिस्ट्रेट संकेत देता है और एक झटके की आवाज होती है– तीनों के सिर लटक जाते हैं। तिरंगा फहराया जाता है और 'हिंदुस्तान–जिंदाबाद' के नारे देश की आजादी की सूचना देते हैं। यह एक संयोग ही था कि जब उन्हें फांसी दी गई और उन्होंने संसार से विदा ली, तब भगतसिंह की उम्र 23 वर्ष 5 माह 23 दिन थी और दिन भी था 23 मार्च। अपनी फांसी से पहले भगतसिंह ने अंग्रेज सरकार को एक पत्र भी लिखा था, जिसमें कहा था कि उन्हें अंग्रेजी सरकार के खिलाफ भारतीयों के युद्ध का प्रतीक एक युद्धबंदी समझा जाए तथा फांसी देने के बजाय गोली से उड़ा दिया जाए, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। लोगों के भय से डरी सरकार ने 23–24 मार्च की मध्यरात्रि ही इन वीरों की जीवन-लीला समाप्त कर दी और रात के अंधेरे में ही सतलज के किनारे उनका अंतिम संस्कार भी कर दिया। भगतसिंह की शहादत से न केवल अपने देश के स्वतंत्रता संघर्ष को गति मिली बल्कि नवयुवकों के लिए भी वह प्रेरणाश्रोत बन गए। वह देश के समस्त शहीदों के सिरमौर बन गए उन्होंने अपनी जवानी देश की आजादी के लिए समर्पित कर दी। नाटक के अंत में गीत का स्वर गूँजता है–

"सब रंगों से ऊंचा रंग–रंग बसंती
हक के लिए है करता जंग–रंग बसंती
कई क्रांतियाँ हुई जगत में
एक क्रांति अब और हो
वसन, अन्न, रहने को ठैया
समता का फिर दौर हो
जीने का बदलेगा ढंग रंग बसंती!"[16]

यहीं पर नाटक का अंत हो जाता है। अंत में लिखी ये पंक्तियाँ सम्पूर्ण नाटक की आत्मा है। सहगल जी द्वारा लिखा गया यह नाटक राष्ट्रप्रेम और जनजागरण से ओत–प्रोत है। भगतसिंह भारत के एक प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी क्रांतिकारी थे। आज भी सारा देश उनके बलिदान को बड़ी गंभीरता व सम्मान से याद करता है। सहगल जी का यह नाटक भी हमें यही याद दिलाता है। 'रंग–बसंती' नाटक की प्रथम प्रस्तुति 'छायानट' द्वारा 1 दिसम्बर, 1981 को श्रीराम सेंटर, नई दिल्ली के मुख्य प्रेक्षागृह में की गई। कई बार मंचित होकर तथा साहित्य कला परिषद, दिल्ली द्वारा सर्वश्रेष्ठ नाट्यालेख के रूप में समादृत हो चुका 'रंग–बसंती' नए रंग में पाठकों के हाथ में देते हुए सार्थकता का ही अनुभव किया जा सकता है। वस्तुतः गंभीर रंग–कर्म करने वालों के लिए यह एक उपहार है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. सहगल, प्रताप. रंग बसंती. आर्य प्रकाशन मण्डल. पृष्ठ **18.**
2. वही0 पृष्ठ **200.**
3. वही0 पृष्ठ **24.**

4. वही0 पृष्ठ **28.**
5. वही0 पृष्ठ **12.**
6. वही0 पृष्ठ **32.**
7. वही0 पृष्ठ **31.**
8. वही0 पृष्ठ **12.**
9. वही0 पृष्ठ **42.**
10. वही0 पृष्ठ **74.**
11. वही0 पृष्ठ **80.**
12. वही0 पृष्ठ **82.**
13. वही0 पृष्ठ **85.**
14. वही0 पृष्ठ **86.**
15. वही0 पृष्ठ **87.**
16. वही0 पृष्ठ **88.**
17. सहगल, प्रताप. नए दौर का हिन्दी नाटक. ए.पी.एन. पब्लिकेशन्स।
18. सहगल, प्रताप. स्मृति में समय. ए.पी.एन. पब्लिकेशन्स।
19. सहगल, प्रताप. मेरा साक्षात्कार. इंडिया नेट बुक्स।